उच्च प्राथमिक कक्षाओं में हिन्दी शिक्षण कुछ अनुभव

कमलेश चन्द्र जोशी

चित्र: हीरा धुर्वे

प्राथमिक कक्षाओं में भाषा पढ़ाने के नज़रिए एवं विधियों के बारे में करीब डेढ़ दशक से काफी चर्चा होती रही है लेकिन उच्च प्राथमिक कक्षाओं में भाषा पर किस नज़रिए से व कैसे काम करें, इस पर विमर्श कम ही दिखाई पड़ता है। इसको लेकर सर्व शिक्षा अभियान व विभिन्न संस्थाओं ने भी कम सोच-विचार ही किया है। इन सब संस्थाओं एवं संस्थानों का अधिकतर ध्यान पढ़ने-लिखने की बुनियाद पर ही रहा है। ऐसा लगता है कि बच्चों का 'पढ़ना है समझना' का क्रम आगे की कक्षाओं में भी जारी रहना चाहिए। इससे बच्चों में साहित्यिक रुझान पनपेगा और उनको उत्साही पाठक बनाने में मदद मिलेगी। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि एक विषय की समझ दूसरे विषय से जुड़ी होती है। अगर बच्चे की भाषा सुदृढ़ होगी तो उसे अन्य विषयों को समझने में भी मदद मिलेगी। इस दृष्टि से हिन्दी पर भी एक सुविचारित दृष्टिकोण से काम करने की आवश्यकता है।

मिडिल कक्षाओं में हिन्दी शिक्षण

मुझे विगत वर्षों में उच्च प्राथमिक कक्षाओं के शिक्षकों व बच्चों के साथ दो शैक्षिक सत्रों में काम करने का मौका मिला। इस दौरान मुझे मिडिल स्तर पर हिन्दी शिक्षण को लेकर कुछ बातें समझने को मिलीं जिन्हें मैं इस आलेख में साझा कर रहा हूँ। चूँकि इन अनुभवों का दायरा उत्तराखण्ड राज्य के ऊधमसिंह नगर ज़िले को लेकर सीमित है, इसलिए ज़रूरी नहीं है कि इन्हें अन्य ज़िलों में सामान्यीकृत किया जा सके। कुछ मायनों में अन्य स्थानों की स्थिति कुछ फर्क हो सकती है।

इस राज्य में बहुत-से विद्यालय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों से अलग, उच्च प्राथमिक विद्यालय के रूप में हैं जिनमें केवल छठी से आठवीं तक की पढ़ाई होती है। शिक्षकों के साथ कार्य करते हुए सर्वप्रथम तो यह देखने को मिलता है कि उच्च प्राथमिक कक्षाओं में सीधी नियुक्तियाँ नहीं होती हैं बल्कि अधिकांश शिक्षक प्राथमिक स्तर से प्रमोशन पाकर आए हैं और उनका प्राथमिक विद्यालय में पढ़ाने का अमूमन आठ-दस वर्ष का अनुभव रहता ही है। यहाँ पढ़ाने वाले बहुत-से शिक्षकों का विषय हिन्दी नहीं होता लेकिन वे फिर भी हिन्दी पढ़ाते हैं। हो सकता है कि ये स्थिति अन्य विषयों के साथ भी हो।

पाठ्यपुस्तकों तक सीमित शिक्षण

शिक्षकों से बातचीत व कक्षा अवलोकन से यह समझ में आया कि इन विद्यालयों में भी भाषा शिक्षण का नज़रिया भाषा की शुद्धता, पारम्परिक मूल्य व व्याकरण का ही रहता है। साथ ही, शिक्षण का तरीका भी वही इस्तेमाल किया जाता है जो शिक्षकों ने अपने स्कूली दिनों में सीखा हुआ होता है। पाठ्यपुस्तक के पाठों की व्याख्या करना और उस पर आधारित प्रश्नोत्तर ही यहाँ की मुख्य शिक्षण विधि है। अगर बच्चों की बात की जाए तो उन्हें हिन्दी या इतिहास में बहुत अन्तर नहीं दिखाई देता। उन्हें लगता है कि सभी विषय एक ही हैं। अगर उनसे चर्चा करें कि हम हिन्दी क्यों पढ़ते हैं तो जवाब मिलता है कि कहानियों-कविताओं से हमें शिक्षा मिलती है। इस प्रकार वे हिन्दी को एक सीख देने वाले विषय के रूप में ही जानते हैं। ज़ाहिर तौर पर इस तरह का नज़रिया उनमें कक्षा के अनुभवों से उपजा होगा। प्राइवेट विद्यालयों के बच्चे तो मानते हैं कि 'हिन्दी क्या पढ़ना, इससे क्या होगा'।

सबसे ज़्यादा कमी इस बात की लगती है कि वे पाठ्यपुस्तकों की रचनाओं को अपने अनुभवों या अपने परिवेश से जोड़कर नहीं देख पाते। ऐसा लगता है जैसे पाठ्यपुस्तकों की रचनाएँ कुछ अलग दुनिया की चीज़ें हैं और हमारा जीवन-परिवेश कुछ अलग ही है। जबकि साहित्य का

जीवन से अन्तरंग जुड़ाव होता है। इसका कारण शायद यह रहता है कि उन्हें कक्षा में ऐसे अनुभव ही नहीं मिलते। वे इसकी पढ़ाई को केवल प्रश्नों के उत्तर तक ही सीमित मानते हैं। भाषाई सौन्दर्यबोध का विकास तो दूर की कौड़ी है, उनका इस विषय को पढ़ने के प्रति कोई झुकाव ही दिखाई नहीं पड़ता। इसके मौके उन्हें न विद्यालय में मिलते हैं, न घर पर।

ऐसा भी देखा गया कि विद्यालयों में कविताओं के सस्वर गायन को ही बहुत अच्छी शिक्षण विधि माना जाता है। भले ही उस कविता पर उनके साथ कोई सार्थक चर्चा न हो। इसमें एक अनुभव याद आ जाता है। एक विद्यालय में शिक्षिका ने बच्चियों को बहुत-सी चौपाइयाँ याद करा रखी थीं और कोई आगन्तुक विद्यालय भ्रमण में आते तो वे अपनी कक्षा में चौपाइयाँ सस्वर प्रस्तुत करातीं। व्याकरण शिक्षण परिभाषाओं तक ही सीमित दिखाई दिया। राज्य में एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकें लागू हैं लेकिन उन पर किताबों में दिए गए दृष्टिकोण से काम नहीं हो पाता।

इसके साथ ही यह भी समझने को मिला कि इन शिक्षकों के सर्व शिक्षा अभियान के तहत हिन्दी पर कुछ प्रशिक्षण हुए हैं। लेकिन इन प्रशिक्षणों की गुणवत्ता सन्दिग्ध ही लगती है। शिक्षकों का कहना है कि विज्ञान और गणित के प्रशिक्षण तो हो जाते हैं पर हिन्दी व सामाजिक विज्ञान हाशिए पर ही रहता है। कई शिक्षकों को कुछ बच्चों में पढ़ने-लिखने के कौशल में कमी की शिकायत रहती है लेकिन उसके लिए कोई विशेष प्रयास किया जाता हो, यह पहल दिखाई नहीं पड़ती। यदि कुछ प्रयास किए भी जाते हैं तो वे मात्राओं, वर्तनी एवं व्याकरण सुधार तक सीमित होते हैं। पढ़कर समझने, अभिव्यक्ति और पढ़ने की आदत के विकास को लेकर प्रयासों में कमी दिखती है।

विद्यालयों के पुस्तकालय में कुछ किताबें तो मिल जाती हैं लेकिन कुछ विद्यालयों में ही ये बच्चों को पढ़ने के लिए यदा-कदा मिल पाती हैं और ज़्यादातर किताबें अधिकांशत: इन बच्चों में पढ़ने का उत्साह जगाने वाली नहीं होतीं। प्राथमिक कक्षाओं के कुछ शिक्षकों का यह भी कहना होता है कि "हमने तो अपने स्तर पर कुछ बच्चों में किताबों के लेन-देन की आदत डाली भी थी लेकिन उच्च प्राथमिक कक्षाओं तक पहुँचने पर उन्हें इस तरह का माहौल नहीं मिल पाता और वे हमसे ही कभी-कभी किताबें माँगने आते हैं। कुछ बच्चों की यह आदत छूट भी जाती है।"

प्रक्रियाओं में बदलाव के कुछ प्रयास

इस कड़ी में जब एक विद्यालय में कुछ शिक्षकों के साथ जुड़कर कार्य किया तो इस बात पर सबसे ज़्यादा ज़ोर दिया गया कि किसी पाठ को पढ़ाने के दौरान, उस पर बच्चों के

साथ चर्चा भी की जानी चाहिए। एनसीईआरटी की 'वसंत' शृंखला की पाठ्यपुस्तकों में इस तरह की खूब गुंजाइश है। कक्षा की प्रक्रियाओं में बच्चों को खुले प्रश्नों के द्वारा खुद से सोचने व अपने अनुभव जोड़ने का मौका ज़रूर दिया जाता और पाठ में भाषायी प्रयोग से जुड़े सवालों पर भी ध्यान दिलाया जाता। इसके साथ ही, बच्चों को अपने अनुभवों व विचारों को लिखकर अभिव्यक्त करने के नियमित मौके भी दिए गए।

परन्तु इस विधि के बारे में अधिकतर शिक्षकों की यह चिन्ता रहती है कि अगर वे बच्चों से इतनी बातचीत करेंगे तो अन्य विषय कब पढ़ाएँगे, कोर्स कैसे पूरा होगा। हमने उन्हें समझाया कि अगर बच्चे पाठ से कोई जुड़ाव ही नहीं बना पा रहे हैं तो केवल पाठ पूरा कराने से तो कोई लाभ नहीं होगा। हमें हिन्दी शिक्षण के दूरगामी लक्ष्यों की तरफ ध्यान देना चाहिए जहाँ बच्चों में पढ़कर समझना, अभिव्यक्ति, विधाओं की समझ आदि की बात तो हो ही, साथ ही आधुनिक मूल्य, भाषायी सौन्दर्यबोध, साहित्य के प्रति अनुराग, पढ़ने की आदत का विकास आदि उद्देश्यों का भी ध्यान रखा जाए।

इस विद्यालय में पुस्तकालय उपलब्ध था और बच्चों को प्रतिदिन पुस्तकालय के लिए एक कालांश का समय भी मिलता था। इस समय का उपयोग भी बच्चों में पढ़ने के प्रति रुचि जगाने के लिए किया गया। इसमें बच्चे खुद भी किताब पढ़ते और उन्हें किताब पढ़कर सुनाई भी जाती। उनके साथ किताबों पर चर्चा होती और उन्हें लिखने के मौके भी दिए जाते जैसे कि फलाँ किताब तुम्हें क्यों अच्छी लगी, या किसी किताब में बच्चों के अनुभव उभरकर आते तो उन्हें भी लिखने को कहा जाता। बच्चे किताबों को पढ़ने के लिए अपने घर भी ले जाते।

कुछ कक्षा-अनुभव

आगे कक्षा शिक्षण से जुड़े कुछ उदाहरण देना ठीक रहेगा। एक दिन छठी कक्षा में हेलन केलर द्वारा लिखित पाठ 'जो देखकर भी नहीं देखते' पढ़ाया जाना था जिसमें प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता की बात उभारी गई है। हमें महसूस हुआ कि इस पाठ को पढ़ाने से पहले इसकी लेखिका के बारे में बच्चों को अच्छे से बताया जाए। इसके लिए एक चित्रात्मक किताब बच्चों के साथ पढ़ी गई और उसके माध्यम से लेखिका के जीवन और उनके संघर्ष के बारे में जानकारी दी गई। फिर कक्षा में इस पाठ को पढ़ने के उपरान्त बच्चों के साथ इस पर चर्चा भी की गई। चर्चा में कुछ इस तरह के प्रश्न थे: क्या हम अपने आसपास की चीज़ों को ठीक-से देख पाते हैं? किन पहलुओं की तरफ हमारा ध्यान नहीं जा पाता?

उक्त प्रश्नों के ज़रिए इन बातों को बच्चों के संज्ञान में लाने की कोशिश की गई कि हम अपने आसपास के बहुत-से पेड़-पौधों यहाँ तक कि पक्षियों और उनके घोंसलों के बारे में भी नहीं जानते हैं और बहुत-से परिचित मज़दूरों की ज़िन्दगियों के बारे में हमें पता ही नहीं होता। शायद समाज में व्याप्त भेदभाव को भी अच्छे से नहीं पहचान पाते। टेलीविज़न चैनल क्या बताते हैं, उसे ठीक-से नहीं समझ पाते। इसमें बच्चों को यह एहसास कराने की कोशिश की गई कि हम अपने आसपास के प्रति ज़्यादा सजग व संवेदनशील बन सकते हैं।

इसी पाठ में 'प्रकृति के जादू' की बात की गई है। इस बारे में बच्चों से पूछा गया तो उन्हें इस पर सोचने में थोड़ी मशक्कत करनी पड़ी और वे फूल खिलने व सूरज के उगने का उदाहरण ही दे पा रहे थे। इसको और स्पष्ट करने के लिए तूलिका प्रकाशन की एक पुस्तक 'पतंग पेड़' का सहारा लिया गया। इस पुस्तक में एक पेड़ किस तरह से साल भर अपने रंग बदलता है, उसे चित्रित किया गया है। इस तरह से बच्चों के सामने 'प्रकृति के जादू' के विभिन्न पहलुओं को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया।

इसके बाद प्रेमचंद की कहानी 'नादान दोस्त' पर चर्चा की गई। इस चर्चा में बच्चों को पशु-पक्षियों को पालने से जुड़े अनुभवों को अभिव्यक्त करने का मौका दिया गया जिसमें बच्चों द्वारा मुर्गी, पिल्ले आदि पालने के अनुभव उभरकर आए। यह कहानी बाल मनोभावों, बच्चों में जिज्ञासा और पशु-पक्षियों के प्रति संवेदनशीलता का महत्व प्रदर्शित करती है। इस कहानी में बच्चों की चिड़िया के अण्डों से बच्चे निकलते हुए देखने की उत्सुकता को भी दर्शाया गया है। यह हमें समझने का नज़रिया देती है कि हम बच्चों की जिज्ञासा को पहचानें। लेकिन शिक्षकों का कहना है कि बच्चों को अपनी माँ से पूछकर ही अण्डों को देखना चाहिए, अपने मन से काम नहीं करना चाहिए। इस

मुद्दे पर चर्चा करते हुए हमने शिक्षकों को प्राथमिक कक्षाओं में पढ़ी एक कहानी 'बस की सैर' का ध्यान दिलाया जहाँ कहानी की मुख्य पात्र वल्ली अपने घर से दोपहर में बिना बताए बस की सैर के लिए निकल पड़ती है। इसका सन्दर्भ देते हुए शिक्षकों के साथ बात की गई कि हमें किशोरावस्था में पहुँच गए बच्चों की स्वाभाविक प्रवृत्ति को समझना चाहिए जहाँ वे बड़ों को बिना बताए, खुद काम करना चाहते हैं। यहाँ यह बात कहनी भी आवश्यक होगी कि जब पाठों में आए मूल्यों की बात की जाती है और माना जाता है कि बच्चों को हर काम पूछकर ही करना चाहिए, तो इससे यह समझ में आता है कि हम अभी भी परम्परागत रूप से ही सोचते हैं। इस नज़रिए में बदलाव लाने की ज़रूरत महसूस होती है।

स्कूली एवं स्थानीय ज्ञान का जुड़ाव

सातवीं कक्षा की पुस्तक के एक पाठ 'मिठाईवाला' में बच्चों से इस प्रश्न पर चर्चा की गई कि हम अपने गली-मोहल्ले में आने वाले फेरीवालों के बारे में क्या सोचते हैं और उनके साथ कैसा व्यवहार करते हैं। इसी पाठ्यपुस्तक में *तोत्तोचान* पुस्तक से संकलित पाठ 'अपूर्व अनुभव' के ज़रिए दिव्यांग बच्चों से जुड़े अनुभवों पर बातचीत की गई।

इसके अलावा विभिन्न कविताओं – 'चाँद से गप्पें', 'शाम – एक किसान', 'वह चिड़िया जो', 'साथी हाथ बढ़ाना', 'भोर और बरखा' आदि की भाषा, उनके शब्दों और बिम्बों पर चर्चा की गई। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की कविता 'शाम – एक किसान' की चित्रात्मक भाषा की तरफ उनका

शाम–एक किसान

आकाश का साफ़ा बाँधकर
सूरज की चिलम खींचता
बैठा है पहाड़,
घुटनों पर पड़ी है नदी चादर-सी,
पास ही दहक रही है
पलाश के जंगल की अँगीठी
अँधकार दूर पूर्व में
सिमटा बैठा है भेड़ों के गल्ले-सा।

ध्यान आकर्षित किया गया। इसमें कवि ने शाम को जिस तरह से चित्रित किया है, उसका सन्दर्भ देते हुए हमें बच्चों को यह एहसास कराना चाहिए कि हिन्दी हम इसलिए पढ़ रहे हैं ताकि भाषा के महत्व व प्रयोग को समझ सकें कि भाषा कैसे चीज़ों को व्यक्त करने में सहायक होती है।

इस प्रकार इन चर्चाओं द्वारा पाठों को बच्चों के परिवेश व उनके अनुभवों से जोड़ने का प्रयास किया गया जिसे हम राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा के दस्तावेज़ में पढ़ते हैं – स्कूली ज्ञान को स्थानीय ज्ञान से जोड़ना। इसके साथ ही, भाषाई सौन्दर्यबोध की ओर भी उनका ध्यान आकृष्ट करने की कोशिश की गई। बच्चों को समझकर पढ़ना सिखाने व पढ़ने के प्रति रुझान बनाने के लिए, कक्षा में इस तरह के प्रयास किए जाने आवश्यक हैं। तभी हमारा हिन्दी शिक्षण सार्थक बनेगा, नहीं तो हम केवल पाठ्यक्रम ही पूरा कर रहे होंगे।

पुस्तकालय की भूमिका

पुस्तकालय के बारे में शिक्षकों के साथ बातचीत में यह स्पष्टता थी कि पुस्तकालय संचालन में यह प्रयास होना चाहिए कि विविध पठनीय सामग्री द्वारा बच्चों को पढ़ने का एक्सपोज़र दिया जाए और वे किताबें अपने घर भी ले जा पाएँ ताकि उनमें पढ़ने के प्रति रुझान विकसित हो सके। यह सामग्री केवल कविता-कहानी तक ही सीमित न हो बल्कि बच्चे अन्य विषयों से जुड़ी पुस्तकें भी पढ़ें।

इस प्रक्रिया में उन्हें नियमित रूप से पढ़ने के मौके दिए गए और उनके साथ समय-समय पर चर्चा भी आयोजित की गई। बच्चों को *चकमक*

पत्रिका में प्रकाशित कहानियाँ 'मुन्ना बुनाईवाले', 'साइमन और सैंडी' और *साइकिल* पत्रिका में प्रकाशित रचनाएँ 'घुड़सवार', 'शेर और कव्व्या', 'गोदाम' आदि कहानियाँ सुनाई गईं। कुछ किताबें जैसे – 'क्यूँ क्यूँ लड़की', 'इतवा मुंडा ने लड़ाई जीती' भी पढ़ी गईं। इसी तरह 'सप्पू के दोस्त', 'पूड़ियों की गठरी', 'इकतारा बोले' आदि के कुछ पाठ पढ़कर सुनाए गए। 'घुड़सवार' कहानी बच्चों को बहुत अच्छी लगी पर उसका अन्त उन्हें अच्छा नहीं लगा। इन रचनाओं की विषयवस्तु के साथ-साथ, इनके प्रस्तुतिकरण व भाषा पर उनका ध्यान दिलाया गया। कविताओं से परिचित कराने के लिए विनोद कुमार शुक्ल, राजेश जोशी, नवीन सागर, सुशील शुक्ल की कविताएँ पढ़कर सुनाई गईं और उन पर बात भी की गई।

इस प्रक्रिया के बाद शिक्षकों से चर्चा भी हुई कि हमें इस तरह के प्रयास बच्चों के साथ लगातार करने होंगे तभी यह उम्मीद की जा सकती है कि बच्चों में पढ़ने के प्रति रुचि जागेगी। ये प्रक्रियाएँ उनकी भाषा व अन्य विषयों की उनकी समझ को भी मज़बूत करेंगी। बच्चों का पुस्तकों के प्रति रुझान बनाने के लिए हमें भी किताबें पढ़ने में रुचि विकसित करनी होगी तभी हम बच्चों के साथ किताबों का सार्थक उपयोग कर पाएँगे।

कुल मिलाकर, शिक्षकों के साथ किए गए इस कार्य से यह समझ में आया कि उच्च प्राथमिक कक्षाओं में हिन्दी शिक्षण को सार्थक बनाने के लिए, इस तरह के प्रयासों की बहुत ज़रूरत है। इन प्रयासों से ही हम बच्चों में साहित्य व पढ़ने के प्रति रुचि विकसित करने का प्रयास कर सकते हैं। इसके लिए शिक्षकों को पर्याप्त तैयारी व सार्थक प्रशिक्षण की आवश्यकता पड़ेगी।

कमलेश चन्द्र जोशी: प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र से लम्बे समय से जुड़े हैं। पिछले कई वर्षों से अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, ऊधमसिंह नगर में कार्यरत।

सभी चित्र: एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा प्रकाशित पाठ्यपुस्तक *वसंत भाग-1* व *भाग-2* से लिए गए हैं ।